# श्री लाभानन्द ( आनन्दघन )जी-कृत बार भावना ॥

विजयशीलचन्द्रसूरि

श्रीआनन्दघनजी महाराजनुं मूळ साधुपदनुं नाम मुनि लाभानन्द हतुं, ते वात सर्वविदित छे. अवधूतस्वरूपी योगी तरीके तेमणे पोतानुं, गच्छ-मतथी पर एवुं 'आनन्दघन' एवुं नाम अपनाव्युं होय, तेम बनवाजोग छे. एमना नाम तथा गच्छ आदि विशे खूब लखायुं छे, चर्चा थई छे, तेथी ते वातो अहीं अप्रस्तुत छे. १७मा शतकना, एक योगीनी अथवा साधक संतनी कक्षाना तेओ जैन मुनि हता ए वात निर्विवाद सर्वसम्मत छे.

एमणे रचेल स्तवन चोविशी (२२ स्तवनो) तथा पदबहोंतेरी - एम बे रचनाओ उपलब्ध तथा प्रसिद्ध छे. ते उपरांत तेमनी कोई रचना अद्यपर्यन्त जाणवामां आवी नथी.

विद्वान् अने अन्वेषण-दृष्टि-सम्पन्न मित्र मुनि श्रीधुरन्धरविजयजी महाराजे, ताजेतरमां, फुटकळ पानांमांथी, आ योगी पुरुषनी एक नवीन-अप्रगट/अज्ञात रचना शोधी काढी छे, ते अत्रे यथामति सम्पादित करी आपवामां आवे छे. आ रचनानुं नाम छे बार भावना. आ रचनामां कर्ताए क्यांय पोतानुं नाम निर्देश्युं नथी. परन्तु पत्रना अने रचनाना छेडे आपेल-पुष्पिकामां "इति बार भावना आत्मस्वरूपा लाभानन्दजीकृता समाप्ता" एवी पंक्ति छे, तेना आधारे आ रचना तेमनी होवानुं नक्की थई शके छे. वळी, आ आखी रचनानी भाषा तथा शब्दगुंथणी जोतां, आवुं क्लिष्ट अने मार्मिक प्रतिपादन करवानुं आनन्दघनजी सिवाय कोईनुं गजुं नहि, तेथी पण आना कर्ता तेओ ज होय - बीजा कोई लाभानन्द नहीं - एम नक्की करी शकाय तेम छे.

प्रतिनो, अथवा कृतिनो प्रारम्भ जरा विलक्षण रीते थयो छे : "अथ अवधुकीर्तिर्लिख्यते". आ अवधुकीर्ति एटले शुं होय ? 'अवधु द्वारा कीर्तन' अथवा 'अवधु माटे कीर्तन' एवो अर्थ थई शके खरो. पण **अवधु** शब्दनी आ रीतनी हाजरी, कर्ता लाभानन्दजीनी विलक्षण आन्तरिक/आत्मिक भूमिकानो संकेत जरूर आपी जाय छे.

३९ कडीओमां व्यापेली आ रचनानो विषय जैन-प्रसिद्ध अनित्यादि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बार भावनाओनुं तात्त्विक स्वरूपवर्णन छे. कर्ताए प्रथम कडीथी सीधुं भावना-निरूपण ज आदरी दीधुं छे; आरम्भनी तथा अन्तनी प्रचलित औपचारिकताओमां तेओ पडता नथी. आ पण तेमनी निःस्पृह उच्च भूमिकानुं सूचक छे.

भाषा मारु-गूर्जर अथवा मारवाडीप्रधान हिन्दी छे. बे ज छन्दोनो उपयोग कर्यो छे : दुहो तथा छन्द. आ छन्द ते सम्भवतः कुण्डलिया होय तेवुं मने लागे छे. चोक्कस तो जाणकारो कही शके.

आनन्दघन-साहित्यना प्रेमीओ तथा अभ्यासीओने बराबर जाण छे के तेमनी भाषा केटली गहन-गम्भीर, मार्मिक अने अल्पाक्षरी होय छे. आपणे एम धारीए के बार भावना तो प्रसिद्ध विषय छे, तेने तो सुगमताथी समजी-उकेली शकाय, तो अवश्य थाप खाई जवाय तेवुं छे. द्रव्यानुयोगना विषयने आ लघु कृतिमां तेमणे ठांसी ठांसीने एवो तो भरी दीधो छे के अभ्यासीओ निरन्तर ऊंडुं मन्थन कर्या ज करे, अने तोय तत्त्वनो ताग मळे के ना मळे !

प्रसंगोपात्त, एक वात जणाववी अत्रे प्रस्तुत थई पडशे के 'गुजराती साहित्य कोश (मध्यकाल)' जेवा सन्दर्भ ग्रन्थमां 'लाभानन्द' नामक कविनुं अधिकरण ज नोंधायुं नथी. हा, 'आनन्दघन'ना अधिकरणमां, तेमनुं नाम 'लाभानन्द' होवानो उल्लेख जरूर छे, पण ते नामनुं जुदुं अधिकरण नथी. कर्तानी सर्व रचनाओ 'आनन्दघन' ए नामथी ज मळे छे, तेथी ज आम हशे एम मानी शकाय; साथे एम पण नक्की थाय के 'लाभानन्द' नामना अन्य एक पण कवि मध्यकालमां थवानुं नथी नोंधायुं, तेथी पण आ रचना आनन्दघनजीनी ज छे एम सिद्ध थाय छे.

आ रचनानी भाषा स्तवनो/पदोनी भाषा करतां वधु कठिन छे. बनारसीदास वगेरे अध्यात्मविदोए प्रयोजेली भाषा प्रायः आ प्रकारनी छे. तेथी ते प्रकारनी कृतिओ-भाषाना तज्ज्ञो ज आना शब्दार्थ पकडी शके. अने ते पकडाय तो ज यथार्थ पदच्छेद आदि थाय. अत्यारे तो यथामति नकल करी मूकी छे.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

## बार भावना ॥

॥ ८०॥ अथ अवधुकीर्तिर्लिख्यते ॥

**दोहा ॥**

ध्रुव वस्तु निश्चल सदा अथ भाव प्रज्याव ।
स्कंधरूप जो देखीइं पुदगलतणो विभाव ॥१॥

**छन्द ॥**

जीव सुलक्षणा हो मो प्रतिभासिओ आज
परिग्रह परतणा हो तासुं को नहि काज ।
कोई काज नांहि परहुं सेती सदा ऐंसो जांनीइं
चेतनरूप अनुप निज धन ताहिसें सुख मानीइं ॥
पिय पुत्त बंधव सयल परियण पथिक संगी पेखणा
सम नांण दंसणस्यउं चरित्तहें रहें जीव सुलक्षणा ॥२॥

असरण वस्तु ज परिणवन सरण सहाइ न कोय ।
अपनी अपनी सकतिके सबे विलासी जोय ॥३॥

**छन्द ॥**

मरणा जाणें आयुहें कायर सोइ होय
मोह व्यापए तासहो सरण विसोइ जोय ।
नवि सरण जोवहि अप्प सोहही सत्य छें न जु भासही
पहिचांन कृत क्रम-भेद न्यारे शुद्ध भाव प्रकासहि ॥
जिम धाय बालक अन्नभेदी बाहिर मारग सम धरे
जीवतव्य तासौ देह पोषी मरण सेती को डरें ॥४॥

**दोहा ॥**

संसाररूप को वस्तु नांहि ए भेदभाव अग्यांन ।
ग्यांनदृष्टि धरि देखि जियरे सबे सिद्धि समान ॥५॥

**छन्द ॥**

ए संसार ही भाव हो परसुं कीजें प्रीति
जहां सुखदुख मानीइं हो देखि पुदगलकी रीति ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुदगल-द्रवकी रीति देखी सुख दुख सब मानिया
चहुं गति चौरासी लख जोनि आपणा पद जानिया ॥
यह अपनो पद शुद्ध चेतनमांहि दिट्ठ जुं दीजीइं
अनादि नाटक नटत पुग्गल तासुं प्रीत न कीजीइं ॥६॥

**दोहा ॥**

एक दशा निज देखिकें अप्पा लेहु पिछानि ।
नानारूप विकल्पना सो तुं परकी जांनि ॥७॥
बोलत मोलत सोवता थिर मोनें जागंत ।
आप सभावि एक पुनि जिति तिति अन नभंत ॥८॥

**छन्द ॥**

हंस विचक्षणा हो विचार एकता आस
जम्म ण किनि धर्यो हो मरणा को नहि पास ।
मरण किसकि न जम्मु धरिओ सुरग नरकें को गयो
अनंत बल वीर्य सुक्ख जाके दुख कहि कि न सो गयो ॥
निज सहजनंद सुजाव अपनें थिर सदा चिदगुण घणा
धरि धांन जोया नहि रूप दोया जानि हंस विचक्षणा ॥९॥

**दोहा ॥**

अण अण सत्ता धरें अन्न अण परदेस ।
अन्न अन्न थिति मंडिया अन न अंन प्रवेस ॥१०॥

**छन्द ॥**

हंस सयानडा हो अप्पा अन्न हि जोय
सव्व सहावई हो मलियो किसहिं न कोय
नवि कोय मलियो किसही सेती एक खेत अवगाहिया
परदेस परचें करें नांहिं नियत लक्षण बांहिया
सोभा बिराजित सबें भूषित एक समें पयांनडा
कोइ नांहि साहिब अउर सेवक हंस सयानडा ॥११॥

**दोहा ॥**

निम्मल गति जिय अप्पनी जेहो जांनि अयास
अयास छि जड जांनि तुंहु वेयए अप्प पयास ॥१२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छन्द ॥

हंसा निम्मला हो जांणहु अप्पसरीर
रोग न व्यापें हो दुःख न दारिद पीर
पीरा न व्यापें दुःख दारिद रोग निकट न आवहि
ग्यांन दंसणस्यौं चरित्तह शुद्ध अप्पा भांवहि
मल मूलधारी अति बिथारी जाति पुग्गल ति भला
निज देह तेरी सुखह केरी जानि हंसा निम्मला ॥१३॥

दुहा ॥

आश्रव बंध अप्पा नहि अप्पा केवल नांण
जो इन भावें अनुसरें तो निम्मल होइ विहांण ॥१४॥
केवल मल परि वंजियो जं हिसो चाहिअ णाय
तिसो सबरस संचरें परें न कोइ जाय ॥१५॥

छन्द ॥

आश्रव एहुं जिया हो पुग्गल कौंण उपजाव
सहि जहि होइ जिया हो ताकी सकति सुहाव
सुभाव सक्ति सब तासु केरी देखि मूढो मान ए
यह सकल रतना में जुं कीनी नांहि कोइ आन ए
तिस भर्म बुद्ध सौ आपु अरुझें एक खेतहि वासओ-
नादि काल विभाव ऐंसौ सोइ जांणि जियडे आश्रओ ॥१६॥

दोहा ॥

यहुं जिउ संवर अप्पणो अप्पा अप्प मुणेय ।
जो संवर पुग्गलतणो कुमतिरोध हवेय ॥१७॥
सुभाउ रूप जो दिट्ठु हें जांणे गुण परिनाय ।
सो जिय संवर जोंणि तुं अपणें पदें स नाय ॥१८॥

छन्द ॥

संवर एहु जिया हो अपने पद हि विचारि
जो परदव्व जिया हो ताकी नांहि संचार
संचार नांहि परदरवकेरो पद हि आप विचारीइं
पंडित गुण सौं भयौ परचौं मूढ दोष निवारइ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सहज परणत भई परगट किम होहि करम कदंबरो
अनाहि वस्तु सहाइ परणवें जांणि जियडे संबरो ॥१९॥

**दोहा ॥**

पयोगी अपने पयोगसौं त्यारे जांणत भोग ।
यापें देखन सकति हे ताकी धारण योग ॥२०॥
यह योग की रीति हें मलि मलि करे संयोग ।
तासौं निरजरा कहत हें बिछुरे होय वियोग ॥२१॥

**छन्द ॥**

निज्जरा तासकी हो कम्मह तणा संयोग
थिति पूरी भइ हो लागें होत वियोग
होत वियोग तस कौन राखें गवन दहदिशि धावहि
पिछलें निवास होय अेंसो आगें अउर न आवहि
यह सकल पुदगल-दरबकेरी मिलन बिछरन आसकी
ज्ञानदृष्टि धरे देखि चेतन होय निज्जरा तासकी ॥२२॥

**दोहा ॥**

सकल दरब त्रिलोकमें मुनि कि पटंतर दीन
जोग जुगति कर थप्पिया निश्चय भाव धरीन ॥२३॥

**छन्द ॥**

तिनुं लोक एहो ही परमकुटि सुखवास
मुनि जोग दीयें हो सिद्ध निरंजन भास
सिद्ध निरंजन भास तिनकों सहज लीला किजीइं
तिस कुंटिमांहि जु भावधारा बाहिर पर जें न दीजीइं
किस गुरु नांहि कोइ चेला रहें सदा उदासओ
आलोक मध्य जु कुरी रचना तीन लोक सुखवासओ ॥२४॥

**दोहा ॥**

धर्म करो बे धर्म करो किरिया धर्म न होय
धर्म तु जांणण वस्तु हें ग्यांनदृष्टि धरि जोय ॥२५॥
करण करावण ग्यान नांहि पढण अरथ नहि ओर
ग्यांन दिट्ठे नहि उपजें मोहातनि झकोर ॥२६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

**सोरठि** - धर्म न पढियां होय धर्म न काया तप तपे
धर्म न दीइं दांन धर्म न पूजा जप जपे ॥२७॥

**दोहा ॥**

दांन करो पूजा करो तप जप करो दिन राति
इक जांण न वस्तु बिसरी यन करणी मदमाति ॥२८॥
धर्म वत्थुसहाव हो जो पहिचांणो कोय
ताहि अवर क्यौं पूजीइं हो सहज उपजें सोय ॥२९॥

**छन्द ॥**

धर्म जु निर्मल हो जाणहु वत्थु-सहाव
आप हि धम्मिया हो धर्म हि आप सहाव
आपणो सभाव हि धर्म जांणो जांणि धर्म्मी आपहु
संकलप विकलप दूर टरकैं यह निज कर थापहु
विवेक व्रत निज निज हीयें धरकें तिहि सहित सोभित सब कला
अनादि वस्तु-सहाव अैंसो जांनि धर्म जु निर्मला ॥३०॥

**दोहा ॥**

दुलभ परको भाव ताकी प्रापति व्हैं नहि
जो अपणो हि सभाव सो क्यौं दुर्लभ जांणीइं ॥३१॥

हंस न दुलभा हो मुकति सरोवरतीर
इंद्रिरहित जिया हो पीवहु निरमल नीर
निरमल नीर पाइ तिरस भांजे बिरह व्याकुल सो नहि
सुगम पंथ हि पथिक चालें सस भइमहि को नहि
आतम सरोवर ज्ञांन सुख जल मुकति पदवि सुलभो
सुक्षेत पंथसु ससय गवनों जन हि जांनि सुदुलहो ॥३२॥

**दोहा ॥**

सो सुंणि **बारह भावना** अंतरगति उल्लास
सो सम्मदिट्ठि जीवडा समें समें पर भास ॥३३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बाहिर योगा परिणमन अंतरगति परमत्थ
सो तिस पंडित जांण तुं ओर सवे अकयत्थ ॥३४॥
सुद्रव्य खेत्र सुकालसुं सो सभाव सम लीण
सहज शक्ति परगट भइ आनन भासें दीन ॥३५॥
गुण सत्ता के जांण ते सात भइ चहुअ ओर
विनु जानें अेंसी हुंति जित तित लागत सोर ॥३६॥
सोर गयो चिहुं चोरको बिती निसा अपाण
गुण सत्ताके जांणतें निरमल दृष्टि विहान ॥३७॥
कर्म सुभाव उदय गत समें समरस लीन
माखी भूत थित्या थकिं देखें ग्यांन प्रविण ॥३८॥
अकथ कहां[नी] ग्यांनकी कहण सुणण की नांहि
आपही पे पाइइं जब देखें घटमांहि ॥३९॥

इति **बारभावना आत्मस्वरूपा लाभानंदजी** कृतः ॥ समाप्तः ॥

★

| कडी क्र. | शब्द | अर्थ |
|---|---|---|
| १ | प्रज्याव | पर्याय |
| २ | सम | सम्यक् |
| ४ | धाय | धावमाता |
| ७ | अप्पा | आत्मा |
| ८ | मोलत | महेलात/हवेली |
| ११ | पयांनडा | — |
| १९ | संबरो | संवर |
| २० | पयोगी/पयोग | प्रयोगी/प्रयोग |
| २९ | वत्थुसहाव | वस्तुस्वभावो धर्मः |
| ३२ | भइ | भय |

★

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org